सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन पर अतिक्रमण व उसका गरीबों पर प्रभाव : बागेश्वर जनपद के गांव-गडेरां का एक क्षेत्रीय अध्ययन

(15)

प्रताप सिंह गढ़िया

गिरि विकास अध्ययन संस्थान

सेक्टर ओ, अलीगंज हाउसिंग स्कीम

लखनऊ-226 024

1998

सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन पर अतिक्रमण व उसका गरीबों पर प्रभाव : वागेशवर जनपद के गांव–गडेरां का एक क्षेत्रीय अध्ययन

प्रताप सिंह गढ़िया

गिरि विकास अध्ययन संस्थान
सेक्टर ओ, अलीगंज हाउसिंग स्कीम
लखनऊ-226 024

1998

सामान्य जन सम्पति संसाधन पर अतिक्रमण व उसका गरीबों पर प्रभाव : वागेशवर जनपद के गांव-गडेरा का एक क्षेत्रीय अध्ययन

डॉ० प्रताप सिंह गढ़िया

साधारणतया मानव निर्मित तथा प्रकृति प्रदत्त-भण्डार व बहाव के रूप में उपलब्ध संसाधनों के स्वामित्व नियन्त्रण व उपयोग की व्यवस्था को राज्य सम्मत्ति, निजी सम्पत्ति, खुली पहुंच वाली सम्पत्ति तथा सामन्य जन सम्पत्ति संसाधन (कामन प्रापर्टी रिर्सोसिज) व्यवस्था के नाम से जाना जाता है। राज्य सम्पत्ति व्यवस्था में सम्पत्ति पर नियंत्रण व स्वामित्व राज्य का होता है जबकि निजी सम्पत्ति व्यवस्था में संसाधन के उपयोग व स्वामित्व का वैधानिक अधिकार व सामाजिक स्वीकृति निजी व्यक्ति को मिली होती है। खुली पहुंच की व्यवस्था वाले संसाधन किसी के नियंत्रण व स्वामित्व में नहीं होते बल्कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके उपयोग का अधिकार होता है। सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन व्यवस्था में किसी गांव या गांवों के समूह के लोगों को लोक शक्ति, विधि सम्मत नियम व सिद्धांत व इसको लागू करने के नियम स्पष्ट रूप से अंकित होते हैं अर्थात सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन व्यवस्था में जितने लोग सम्मिलित होते हैं उनको उस सम्पत्ति से जीविकोपार्जन करने का पूर्ण अधिकार होता है।

सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन में - कृषि भूमि, वन, चारागाह, सरकारी अवस्थापना, नदियां, झरने, नहरें, वन्य जीव तथा मत्स्य आदि संसाधन आते हैं जिनका ग्रामीण सामान्य जन विशेषकर गरीब तबके के लोगों के जीविकोपार्जन में महत्वपूर्ण योगदान है। सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन की महत्ता के सम्बन्ध में सिंह (१९८६) ने भी लिखा है कि पिछली सदी के अन्त तक भारत के ८०.० प्रतिशत भाग में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन विद्यमान थे और ये संसाधन भारत की अर्थव्यवस्था में रीढ़ की हड्डी के समान थे। लोगों को मुफ्त में ईंधन के लिए पेड़-पौधे, खाना बनाने व कमरा गरम करने के लिए गोबर के कण्डे, बांस व इमारती लकड़ी, छत बनाने के लिए ताड़ की पत्तियां, जंगली घास व विविध प्रकार के फल व सब्जियां प्राप्त होती थी और इन चीजों को प्राप्त करने में कोई लागत नहीं लगती थी अर्थात लोग अपने शाररिक श्रम से इन साधनों की व्यवस्था करते थे। लगभग १८६५ में ब्रिटिश शासन काल में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों का स्थायी बन्दोबस्त किया गया जिसमें सुरक्षित, संरक्षित व राजस्व भूमि के तीन रूप सामने आये। आजादी के बाद भारत सरकार ने भी इस व्यवस्था को स्वीकार कर लिया और वर्तमान समय तक यह व्यवस्था चली आ रही है।

जोधा (१९८६) ने भारत के सात राज्यों के अध्ययन में पाया कि ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन से निर्धन परिवार को ५३०-८३० रूपये तक की आय प्राप्त होती है, इसके साथ-साथ ८४-१०० प्रतिशत गरीब परिवार खाद्यान, ईंधन चारा और रेशा प्राप्त करते हैं लेकिन पिछले तीन दशकों में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों के क्षेत्रफल में २६-३० प्रतिशत की कमी आयी है और उसके निजीकरण पर जोर रहा है। आयंगर (१९८८) ने भी २५ गांवों के अध्ययन में पाया है कि यद्यपि सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन भूमि से भूमिहीन व सीमान्त कृषक लाभान्वित होते हैं लेकिन भूमि का आकार व स्तर गिरता जा रहा है।

उपरोक्त पृष्ठभूमि को दृष्टिगत रखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन ग्रामीण क्षेत्र के निर्धनों को आय व रोजगार देने के महत्वपूर्ण स्त्रोत रहे हैं लेकिन बढ़ते जनसंख्या के दबाव के कारण उनमें अतिक्रमण होने लगा है तथा निजीकरण को बढ़ावा मिल रहा है। ग्रामीण जनता के आय व रोजगार के महत्वपूर्ण संसाधन होते हुए भी सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों पर अतिक्रमण व उनका निजीकरण किस प्रकार किया जा रहा है ? कौन से लोग इन संसाधनों पर अतिक्रमण के लिए जिम्मेदार है? और इन संसाधनों पर नियन्त्रण व स्वामित्व किसका है? आदि बातों को ध्यान में रखते हुए उत्तर प्रदेश के पर्वतीय अंचल के जनपद वागेश्वर के गांव गडेरा में उपलब्ध सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन जैसे - सिविल भूमि व वन, पंचायती वन, चारागाह, गूल व पेयजल पर किये गये अतिक्रमण व निजीकरण की प्रकिया को इस लेख के माध्यम से दर्शाने का प्रयास किया गया है और इन संसाधनों पर किये गये अतिक्रमण व निजीकरण की प्रक्रिया से गांव के गरीबों व स्त्रियों पर पड़ने वाले प्रभाव को देखना लेख का मुख्य उद्देश्य रहा है। प्रस्तुत लेख को लेखक ने दो माह तक गांव में निवास करके सूक्ष्म निरीक्षण के माध्यम से तैयार किया है।

ग्राम-गडेरा में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों की स्थिति

ग्राम-गडेरा में उपलब्ध सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों की स्थिति, नियंत्रण, स्वामित्व व अतिक्रमण का विवरण देने से पूर्व गांव का संक्षिप्त परिचय इस भाग में देना भी तर्क संगत होगा। उत्तराखण्ड के वागेश्वर जनपद के विकास खण्ड कपवोट में स्थित गांव गडेरा का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल १८१० एकड़ है और वर्तमान में १८८ परिवारों में विभाजित १०१७ लोग गांव में निवास करते हैं जिसमें से लगभग २३.० प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति के हैं। ग्राम-गडेरा कमश: गडेरा, फुलई तथा जालेख तीन राजस्व ग्रामों में विभक्त है। तीनों राजस्व गांवों से मिलकर बने गांव गडेरा के लगभग २४.० प्रतिशत भाग में कृषि, २२.० प्रतिशत भूभाग में वन तथा ३८ प्रतिशत भाग में कृषि योग्य बेकार भूमि है इसके साथ-साथ लगभग १६.० प्रतिशत भूभाग कृषि के अयोग्य है। राजस्व विभाग के आंकड़ों के अनुसार गांव की लगभग ७६.० प्रतिशत भाग को सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन के रूप में मानना तर्क संगत होगा क्योंकि मात्र २४.० प्रतिशत भू-भाग ही निजी स्वामित्व के अधीन है। साधारणतया सिविल भूमि व वन, पंचायती वन व भूमि चारागाह, झरने व नाले नौले (कुंआ) नहरें, सरकारी अवस्थापना, छोटे-छोटे रास्ते, गूल व मन्दिरों की भूमि जैसे सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन गांव में मौजूद है लेकिन इस लेख में सिविल भूमि व वन, पंचायती वन, चारागाह, पेयजल व गूल आदि का विवरण प्रस्तुत किया गया है। लेख के अगले भाग में ग्राम गडेरा में उपलब्ध मुख्य सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों पर हुए अतिक्रमण का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

क. *सिविल वन व भूमि*

पर्याप्त जल, घने जंगल व उसमें पाये जाने वाले चारे के वृक्ष तथा उपजाऊ भूमि को दृष्टि में रखते हुए बाहर से आये लोगों ने गांव-गडेरा को बसाया था गांव के अस्तित्व में आने से पूर्व ग्राम वासियों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन था लेकिन भूमि के उपजाऊपन के कारण लोगों ने खेती की शुरूआत की और अपनी शारीरिक शक्ति के अनुसार गांव की भूमि पर कब्जा करना प्रारम्भ किया। यह बहुजन से मुखर हुआ है कि गांव के बसने के प्रारम्भिक दौर में गांव आत्मनिर्भर था क्योंकि गांव में पर्याप्त सिविल भूमि व वन थे लोग अपनी आवश्यक्ता के अनुसार उसका उपयोग करते थे लेकिन जैसा कि गुहा (१९८६) ने लिखा है कि ब्रिटिश शासन काल में सन् १८९३ में बनाये गये वन अधिनियम के अनुसार - समस्त रिक्त भूमि, जो ग्रामीणों

की नाप भूमि के अन्तर्गत नहीं था या पहले जो आरक्षित वन थे उनको संरक्षित वन घोषित किया गया। इस प्रकार आरक्षित वन्य क्षेत्र के बाहर बर्फीले शिखरों, घाटियों, तालाबों, मन्दिर की भूमि, चारागाह, सड़कों, इमारतों तथा दुकानों की भूमि को भी संरक्षित वन भूमि में परिवर्तित कर दिया और ग्रामीणों द्वारा किसी भी प्रकार के वन उत्पादों के व्यापार को निषिद्ध कर दिया।

एक तरफ़ वन अधिनियम के माध्यम से ब्रिटिश सरकार ने गांव में उपलब्ध खाली स्थान को वनों के अधीन कर दिया वहीं दूसरी तरफ गांव में जो मालगुजारी/प्रधान की प्रथा विद्यमान थी उन प्रधानों ने गांव के भूमिहीन व गरीब हरिजनों को अपना आसामी बनाकर गांव की कृषि योग्य उपजाऊ भूमि पर कब्जा करना प्रारम्भ कर दिया। आसामी लोगों को देखकर गांव की जगह-जगह उपलब्ध भूमि पर अन्य लोगों ने भी घेरवाड़ करना प्रारम्भ कर दिया।

सिविल भूमि पर हुए अतिक्रमण के सम्बन्ध में गढ़िया (१९९६) ने भी लिखा है कि आजादी के बाद १९६० के दशक में जब मध्य हिमालय क्षेत्र में जमीन का बन्दोबस्त चला तो अंग्रेजों के शासन से चले सिसविल वन व भूमि पर गांव के जिन लोगों ने घेरवाड़ कर रखा था, उनको कब्जे के आधार पर लीज पट्टे दिये गये और उस घेरवाड़ के माध्यम से कब्जा किये गये भूमि को वर्ग-५ की भूमि कहा गया। जब सिविल भूमि पर लोगों द्वारा किये गये नाजायज कब्जे के पट्टे दिये गये तो गांव के अन्य लोगों ने गांव की शेष बची भूमि व वनों पर अतिक्रमण कर उसमें उपलब्ध चारे की पत्ती वाले पेड़ों, इमारती लकड़ी के बड़े वृक्षों तथा जलाऊ लकड़ी के लिए छोटी छोटी वनस्पतियों का विदोहन करना प्रारम्भ कर दिया और जिस अतिक्रमण वाली सिविल भूमि पर खेती करने की सम्भावना थी उसमें खेती करने लगे।

गढ़िया (१९८४) से भी ज्ञात हुआ है कि सन् १९६५ के भारत-पाक युद्ध के दौरान सेना में भर्ती हुए और १५-२० वर्ष तक सेना में नौकरी करने पर गांव लौटा सैनिक गांव की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्थिति की अनभिज्ञता एवं मात्र १००-२०० रूपया माहवार पेन्सन पाकर अपने को गांव के सामाजिक व आर्थिक कार्यों में भाग लेने में असमर्थ रहता है और अपने को ठगा हुआ महसूस करता है और अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए भूतपूर्व सैनिक भी सिविल भूमि व वनों पर अतिक्रमण करने को आतुर हुए ताकि वे उसमें कृषि कार्य करके अपनी आमदनी बढ़ा सके।

गांव गडेरा के राजस्व गांव जालेख में चीड़ का घना जंगल था सन् १९७० से १९७५ तक गांव को मात्र १२०० रूपया वार्षिक रायल्टी देकर निजी ठेकेदार ने इन जंगलों से लीसा टिपान किया । लीसा टिपान का कार्य वैज्ञानिक रूप से न होने के कारण चीड़ के पेड़ सूखने लगे और सूखे पेड़ों को गांव के लोगों को काटने की ग्राम पंचायत से इजाजत होने के कारण लोगों ने सूखे पेड़ों के साथ-साथ हरे-भरे पेड़ों को भी ईंधन के लिए काटना प्रारम्भ कर दिया इसके साथ-साथ राजस्व गांव गडेरा वा जालेख में इमारती लकड़ी की आपूर्ति भी इसी सिविल वन से होती थी वर्तमान में इस भूमि पर इमारती लकड़ी का एक वृक्ष भी मौजूद नहीं है। गांव के लोगों द्वारा इस सिविल भूमि के कुछ भाग का निजीकरण भी कर लिया है। शेष भूमि में चीड़ के जो छोटे-छोटे पौधे उग आते हैं उनको काटकर लोग ईंधन के रूप में उपयोग कर रहे हैं।

प्रारम्भ से ही गांव की सिविल भूमि में बांज व फल्यांठ के वृक्ष बहुतायत रूप में विद्यमान थे ये वृक्ष न केवल खेती के औजार बनाने के लिए उपयोगी होते है वरन् ईंधन व जाड़ों में कमरा गरम करने के लिए इनका उपयोग किया जाता था

क्योंकि इनमें पूरी लकड़ी जलने तक आग टिकी रहती थी। इसके साथ-साथ जानवरों के चारे के रूप में भी बांज व फल्यांठ की पत्तियों का उपयोग किया जाता है। जैसे-जैसे सिविल भूमि पर अतिक्रमण होते गया तो गांव के सिविल वन से बांज व फल्यांक को अन्धाधुन्ध कटान किया गया वर्तमान में मात्र निजीकरण वाली सिविल भूमि पर ही उपरोक्त वृक्षों को देखा जाता है। अन्य सिविल भूमि पर ये महत्वपूर्ण वृक्ष लुप्तप्राय हो गये है।

सिविल भूमि में सरकार द्वारा हरिजनों को पट्टा देने पर भी सिविल भूमि व वनों के अतिक्रमण को प्रोत्साहन मिला है क्योंकि गांव की बस्ती से दूर होने के कारण कुछ गरीब हरिजन उसमें कब्जा नहीं कर पाये तो कुछ लोगों ने हरिजनों को पट्टे पर दी गयी भूमि के चारों तरफ कब्जा कर लिया ताकि पट्टेदार हरिजन अपने पट्टे की भूमि की मात्रा से अधिक भूमि न ले सके। जहां पट्टे पर दी गयी भूमि पर आवण्टी कब्जा नहीं कर पाये वहां अन्य लोगों ने कब्जा कर लिया।

यद्यपि सिविल भूमि व वनों पर अतिक्रमण व निजीकरण की शुरूआत सिमलात (नाप भूमि से जुड़े भाग) की भूमि से हुई लेकिन यह सिलसिला लगातार जारी रहा है आज यद्यपि राजस्व विभाग के रिर्काड में सिविल भूमि व वन विद्यमान है और उस पर स्वामित्व सरकार का लेकिन नियंत्रण ग्राम पंचायत का है लेकिन गांव में सूक्ष्म निरीक्षण से ज्ञात होता है कि ग्राम समाज की भूमि नाम मात्र की ही उपलब्ध है क्योंकि अधिकतर भूमि व वनों पर अतिक्रमण करके उनका निजीकरण हो गया है।

ख. <u>पंचायती वन व भूमि</u>

पर्वतीय क्षेत्र में वन पंचायतों के एतिहासिक विवरण को प्रस्तुत करते हुए बल्लभ व सिंह (१९८८) ने लिखा है कि जब ब्रिटिश सरकार ने १८९३ के वन अधिनियम के तहत नाप के अतिरिक्त समस्त भूमि को संरक्षित वन के अधीन कर दिया तो उस समय लोगों ने इसकी प्रतिक्रिया में काफी विरोध किया और सन् १९२१ में एक कमेटी 'कुमांयू फारेस्ट ग्रीवान्स कमेटी' बनायी गयी उस कमेटी ने कुमांयू के वनों को वाणिज्यक व अवाणिज्यक दो भागों में विभाजित कर अवाणिज्यक वनों का प्रबन्ध वन पंचायत के माध्यम से करने व राजस्व विभाग को इसके लिए कानून बनाने का सुझाव दिया। इस सुझाव को दृष्टिगत रखते हुए सन् १९३१ के बाद पर्वतीय क्षेत्र में वन पंचायतों का गठन होना प्रारम्भ हुआ। इसके बाद सन् १९७२ व १९७६ में वन पंचायत अधिनियम में परिवर्तन किया गया और अपने कार्यक्षेत्र में उपलब्ध पेड़ों को कटने से रोकना, पंचायत वन से उपलब्ध वन उत्पादों को उस पर अधिकार रखने वाले लोगों को बराबर बांटना, वन पंचायत सीमा निर्धारण व उसके लिए पिलर्स बनाना ताकि अतिक्रमण रोका जा सके तथा जिलाधिकारी व परगनाधिकारी के आदेशों को लागू करने जैसे दायित्व पंचायत को सौंपे गये इसके साथ वन पंचायत में गिरे पेड़ों तथा घास की बिक्री, अपराधी को ५०० रूपये तक दण्ड, हथियारों की जब्ती, पंचायत वन में भटके जानवरों को बन्द करने व जब्त इमारती लकड़ी को बेचने का अधिकार पंचायत को दिये गये।

यद्यपि वन पंचायत गांव गडेरा में भी एक आधिकार सम्पन्न संस्था है लेकिन प्रारम्भ से ही पंचायत सदस्यों के जगरूक न होने के कारण वन पंचायत जैसे सामान्य जन संसाधन सम्पत्ति की दयनीय स्थिति हो गयी है। सिविल भूमि व वनों पर अतिक्रमण व उनका निजीकरण करने के बाद बढ़ती जनसंख्या का दबाव पंचायती वनों पर पड़ना स्वाभाविक था अतः

अतिक्रमण का प्रारम्भिक दौर सिविल भूमि की तरह वन पंचायत की भूमि पर भी लोगों ने अपनी निजी भूमि के सिमलात से जुड़े वन पंचायत भूमि पर कब्जा करके प्रारम्भ किया और वन पंचायती भूमि पर घेरवाड़ करके उसको अपनी निजी भूमि में तब्दील कर दिया।

ग्राम गडेरा की भौगोलिक स्थिति भी इस तरह की है कि आम जनता वन पंचायत की बाहरी सीमा क्षेत्र में उपलब्ध इमारती लकड़ी व कृषि औजारों को बनाने वाले पेड़ों को ग्राम वासियों के उपयोग में लाने में असमर्थ रही है क्योंकि दुर्गम रास्तों के कारण ग्राम वासियों द्वारा इनका उपयोग करना कठिन हो जाता है इसके साथ-साथ सीमावर्ती क्षेत्र में उपलब्ध पंचायती वनों की देख-रेख करना भी कठिन कार्य है जिसके कारण गांव की सीमा से जुड़े गांवों के लोग चोरी-छिपे वन पंचायत में उपलब्ध वनों व वनस्पतियों का विदोहन करते आये है। इसके अलावा वन पंचायत के सदस्य भी चोरी छिपे प्रारम्भ से ही वन उत्पादों की बिक्री स्वआय के लिए जारी रखे थे । जिस कारण वन पंचायत सीमा में स्थित इमारती व कृषि औजार वाले वृक्षों का अभाव होता जा रहा है। पड़ोसी गांव के लोगों द्वारा चोरी छिपे जानवरों का चारा व विद्यौना भी ले जाया जाता है।

साधारणतया गांव में बरसाती मौसम में लौकी, तुरई, छिछण्डा, ककड़ी व करेला जैसी सब्जियों को उगाया जाता है जिनके बेल को सहारा देने के लिए पेड़-पौधों की आवश्यकता होती है। गांव का प्रत्येक परिवार ४-५ चीड़ या अन्य वनस्पनियों के पेड़ इसके लिए काटकर लाते हैं कुल मिलाकर सिर्फ सब्जियों के बेल को सहारा देने के लिए गांव में बसे १८८ परिवार ८-९ सौ तक पेड़ प्रतिवर्ष काट रहें हैं। इसके अलावा गांव में चारे (सूखी घास व पुआल) को इकट्ठा करने के लिए प्रति परिवार ६-७ पेड़ भी मानें तो १२-१३ सौ पेड़ प्रतिवर्ष काटते हैं। जाड़े के मौसम में कमरा गरम करने व ईंधन की आपूर्ति के लिए ग्राम वासियों द्वारा छोटे-छोटे पेड़-पौधों व वनस्पतियों को जड़ से तथा बड़े पेड़ों की टहनियों को काटा जाता है जिससे पंचायती वनों में स्वत: उगने वाले पेड़-पौधे लुप्त प्राय: होते जा रहे हैं। जाड़ों के मौसम के अलावा बरसात के मौसम के लिए भी गांव में प्रति परिवार द्वारा वन पंचायत से एक दो पेड़ प्रतिवर्ष काटे जाते है। प्रतिवर्ष होने वाली शादियों जैसे संस्कार् में भी चीड़ के पेड़ के चारों तरफ फेरे लगाने की प्रथा होने के कारण वन पंचायत से चीड़ के पेड़ काटे जाते हैं।

गांव ग़डेरा की जनता यद्यपि बढ़ती जनसंख्या के दबाव के कारण शादी-विवाह व अन्य सार्वजनिक क्रिया कलापों में सुविधा हेतु दो घड़ों में बंटी थी लेकिन समय-समय पर होने वाले ग्राम सभा के चुनाव ने इन घड़ों को पक्ष व विपक्ष के रूप में बांट दिया अब एक पक्ष पंचायती वनों का विदोहन करता है तो दूसरा पक्ष भी प्रतियोगिता में पंचायती भूमि पर ही अतिक्रमण कर देता है यह प्रक्रिया १५-२० वर्षों से जारी है। भूतकाल में यद्यपि दोनों पक्षों द्वारा वन पंचायत की भूमि में चौकीदार रखकर घास पाली जाती थी व प्रत्येक परिवार को उसका बराबर हिस्सा दिया जाता था लेकिन अब बस्ती से निकट वाले वन पंचायत क्षेत्र में कब्जा होने पर यह प्रथा बन्द है। पंचायती वनों तक जानवरों को चराने ले जाने के लिए रास्ता न मिलने के कारण भी आम ग्राम वासी जानवरों को पंचायती वनों में चराने मे असमर्थ है । इसके साथ-साथ पंचायती वनों में नुकसान करने पर यदि पंचायत जुर्माना भी करती है तो लोग जुर्माना नहीं भरते हैं।

पंचायती वनों के अत्यधिक विदोहन को देखते हुए ८-१० वर्ष पूर्व गांव के बुजुर्गों व शिक्षित लोगों ने वन पंचायत को मां भगवती को समर्पित करने का प्रस्ताव रखा और गांव ने सर्वसहमति जताकर यह कार्य किया लेकिन गांव के गरीब लोगों की चारा ईंधन व अन्य आवश्यक्ताओं की पूर्ति का अन्य विकल्प न होने के कारण पंचायती वनों का विदोहन नहीं रूक पाया बल्कि गांव के गरीब व जरूरत मन्द जिन लोगों ने पंचायती वन से पेड़-पौधे या अन्य वनस्पति काटी थी वे बीमार होने पर उसे दैवी प्रकोप मान रहे हैं और देवी को मनाने के लिए बकरी की बलि दे रहे हैं।

वन पंचायत द्वारा अपराधी पर दण्ड लगाने पर दण्ड न भरने, चौकीदारी प्रथा व मां भगवती को पंचायती वनों को समर्पित करने पर भी पंचायती वनों व उसकी भूमि पर निजीकरण की प्रवृत्ति बनी हुई है फिर गांव में पक्ष-विपक्ष का रूप

भी इसके लिए कम जिम्मेदार नहीं है जिसके कारण पंचायती वनों का इस रूप में विदोहन कर दिया है कि आज गांव में लोगों को इमारती लकड़ी उपलब्ध नहीं हो पा रही है यहां तक कि ईंधन वाली लकड़ी भी बस्ती से मीलों दूर हो गयी है।

ग. चारागाह

ग्राम गडेरा में चारागाहों, पर्याप्त जल व घने जंगलों के कारण ही बाहर के गांवों से लोग इस गांव में आये थे जानवरों को चराने के लिए वर्षभर चारागाह उपलब्ध रहते थे पशुधन के सम्बन्ध में गांव सर्व साधन सम्पन्न था आज से ३५-४० वर्ष पूर्व बाहर के गांवों व शहरों से व्यापारी लोग इस गांव से घी खरीदने आया करते थे लेकिन गांव की सिविल व वन भूमि में हुए अतिक्रमण व निजीकरण के कारण धीरे-धीरे चारागाह भी अतिक्रमण की चपेट में आने लगे।

गांव में स्थित चारागाहों के अतिक्रमण की शुरूआत कुछ लोगों द्वारा गौचर भूमि पर दरखवास्त देने से हुई यद्यपि तत्कालीन जिलाधिकारी द्वारा गांव में उजरनामे के फार्म को तामील किया लेकिन भोले-भाले एवं अनजान लोगों से अनापत्ति के रूप में हस्तााक्षर कराये जाने से दरख्वास्त मंजूर हो गये चूंकि गांव वासियों को यह मालुम न था कि दरखवास्तकर्ता के नाम कितनी गौचर की जमीन मन्जूर हुई है उन्होंने अपनी सुविधानुसार गौचर में घेरवाड़ कर दिया। दरखवास्त वालों की देखादेखी में धीरे-धीरे सभी चारागाह आबाद होने लगे। दूसरी तरफ गैर कानूनी रूप से अवैध कब्जे की भूमि के पट्टे देकर उसको वर्ग-५ की भूमि बनाने पर भी अतिकमण की रफ्तार बढ़ गयी और जिस वर्ग-५ की भूमि पर पहले घास पाली जाती थी उसमें खेती होने लगी और लोगों ने चारागाहों पर कब्जा करना प्रारम्भ कर घास पालना प्रारम्भ किया। घास पालने की इसी प्रकृति के कारण चारागाहों का निजीकरण प्रारम्भ हो गया। यद्यपि १०-१५ वर्ष पूर्व तक इस प्रकार किये गये अवैध कब्जे पर पाली हुई घास काटने के बाद ग्राम वासियों को अपने जानवरों को चराने की छूट मिल जाती थी लेकिन धीरे-धीरे जानवरों को चारागाह तक ले जाने के रास्ते बन्द होने के कारण इस प्रकार के चारागाहों में जानवरों को चराना लगभग बन्द हो गया है और चारागाहों में स्थायी रूप से अवैध कब्जे हो गये हैं।

घ. पेयजल

साधारणतया गांव-गडेरा के निवासी झरना/गधेरा नौला, गूल तथा नलों से पेयजल लेते हैं। विगत १४-१५ वर्ष पूर्व गांव में नलों के माध्यम से पेयजल उपलब्ध कराने का प्राविधान किया गया था सर्वप्रथम जिस स्थान से गांव वासियों को पेयजल उपलब्ध कराना था इसका सर्वेक्षण व निर्माण कार्य सही न होने से आज भी ग्राम-वासियों को पेयजल उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। जब नलों के माध्यम से पानी का बंटवारा गांव के विभिन्न मुजरों में किया गया तो जल स्त्रोत सूखते गये दूसरी तरफ नलों द्वारा सही तरीके से जल आपूर्ति न होने के कारण लोगों ने जहां से उचित समझा वहीं से नल तोड़कर पानी लेना उचित समझा। वर्तमान में एक तरफ जल स्त्रोत के मूल से रिसकर झरनों व नौलों में उपलब्ध पेयजल स्त्रोत सूख गये है वहीं दूसरी तरफ नलों के माध्यम से भी जल आपूर्ति नहीं हो पा रही है।

सरकार द्वारा पेयजल योजना के माध्यम से ग्रामीणों को पेयजल उपलब्ध न होने के कारण लोगों ने जिस स्त्रोत से भी उनको पानी उपलब्ध हो सकता था अपने निजी साधनों से (प्लास्टिक के नल) पेयजल लेना प्रारम्भ कर दिया है जिससे एक तरफ अधिकतर लोग पेयजल ग्रस्त है तो दूसरी तरफ गांव के सिंचित क्षेत्रों में पानी उपलब्ध नहीं हो पा रहा है जिससे फल व सब्जियों के उत्पादन में विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।

गांव के जिन भागों में नलों से पेयजल उपलब्ध था उस योजना की देखरेख ठीक न होने के कारण लोगों ने सार्वजनिक नलों का निजीकरण कर लिया और योजना के ऊपरी भाग में निवास करने वाले लोगों ने अवैध कनैक्सन लेकर अपने खेतों की सिंचाई भी पेयजल योजना से करनी प्रारम्भ कर दी है जबकि गांव के निचले भाग में निवास करने वाले लोग पेयजल के लिए त्राहि-त्राहि मचाये रहते है।

जल स्त्रोत में मूल से बहकर आने वाले जल का लोग पीने के अलावा कृषि कार्यो में भी उपयोग करते थे लेकिन नलों में पानी बंटने से अब सिंचित भूमि असिंचित भूमि में परिवर्तित हो रही है। सिविल भूमि में उपलब्ध नौलों से पानी लेने में भी अवैध कब्जेदार समय-समय पर पेयजल लेने वालों को डराने-धमकाने की चेष्टा करते हुए देखे जाते हैं। सिविल भूमि में उपलब्ध पेयजल को ग्रामवासी अपने जानवरों को पिलाते रहे है लेकिन वर्तमान में जिनको पहले पनघट कहा जाता था उनमें अवैध कब्जा होने व उसमें जानवरों को ले जाने का रास्ता न होने के कारण ग्राम वासी अपने जानवरों को पानी पिलाने में असमर्थ देखे गये है।

ङ. <u>*गूल*</u>

गांव में सिंचाईं व जल निवासी के लिए भूमि बन्दोबस्त के समय से ही गांव के नक्शे में कच्चे गूलों को दर्शाया गया है लेकिन गांव में जिस व्यक्ति के खेत से गूल होकर गुजरते थे उसमें उन्होंने अतिक्रमण करके अपने खेत में मिलाना प्रारम्भ कर दिया जब ऊपरी भाग में स्थित कब्जेदार के खेत में गूल नहीं होगा तो यह स्वाभाविक है कि निचले वाले भाग के खेतों में पानी फैलेगा इस प्रकार पानी के फैलाव से एक ओर जहां गांव की सिंचित भूमि, भूमि कटाव से ग्रसित होते जा रहीं हैं वहीं दूसरी ओर सामाजिक कटुता व वैमनस्यता का वातावरण विकसित होते जा रहा है।

<u>सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन पर अतिक्रमण का प्रभाव</u>

यद्यपि किसी भी सार्वजनिक व सामूहिक सम्पत्ति पर अतिक्रमण स्वलाभ के लिए किया जाता है लेकिन ग्राम-गडेरा में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन के अतिक्रमण से जहां अतिक्रमण कर्ता स्वयं प्रभावित हुए है वहीं समूह में रूप में उनके कष्टों में अत्यधिक अभिवृद्धि हुई है।

१. जब गांव के लोगों द्वारा कृषि के लिए सिविल भूमि पर कब्जा करना प्रारम्भ किया तो एक तरफ पर्वतीय क्षेत्र में कृषकों के खेत बिखरे हुए हैं वहीं दूसरी तरफ अवैध कब्जा भी गांव की बस्ती से दूर किया गया। चूंकि पर्वतीय क्षेत्र की कृषि का अधिकतर भार स्त्रियों के कन्धों पर है ग्राम गडेरा के स्त्रियों पर भी अवैध रूप से कब्जे वाली कृषि भूमि बढ़ने से उनके कन्धों पर अधिक काम का बोझ आ गया दूसरी तरफ खेती का क्षेत्रफल जरूर बढ़ा लेकिन उसमें खाद बीज इत्यादि की मात्रा में उस अनुपात में बढ़ोतरी नहीं हो पायी जिसके कारण कृषकों की अपनी नाप भूमि की उत्पादकता में पड़ने वाले प्रभाव के साथ नयी आबाद की गयी भूमि पर भी उत्पादकता नाम मात्र ही होती है क्योंकि आबादी व बस्ती से दूर होने के कारण जंगली जानवरों द्वारा फसल पकने से पूर्व उनको नुकसान पहुंचाया जाता है तथा मानसून पर निर्भरता के कारण उन खेतों में अनाज का उत्पादन कम होता है जहां उत्पादकता में कमी आयी है वहीं दूसरी तरफ गांव की अच्छी व उपजाऊ भूमि पहले से ही नाप की भूमि या निजी भूमि के रूप में वितरित हो चुकी है जो सिविल भूमि पर कब्जा किया गया है उसमें गरीब लोग गांव के शक्तिशाली वर्ग के दबाव में अवैध कब्जा लेने व करने से वंचित हो गये हैं।

२. सिविल भूमि में अतिक्रमण होने तथा पंचायती वनों के अत्यधिक विदोहन के कारण आज गांव की स्त्रियों व गरीबों को सिर बोझ जलाऊ लकड़ी, जानवरों का चारा व बिछौना लाने के लिए मीलों दूर जाना पड़ रहा है जबकि गांव के शक्तिशाली वर्ग द्वारा जो अतिक्रमण के माध्यम से अपने निजी वन बनाये हैं उनमें से लकड़ी चारा व जानवरों का बिछौना उपलब्ध हो जाता है।

३. चारागाह (गौचर व पनघट) आबाद होने के कारण गांव के गरीब तबके के लोगों को वर्तमान में अपने गौ, वंशीय व बकरी जैसे जानवरों की संख्या को कम करने में विवश होना पड़ रहा है इसके साथ-साथ चारागाह न होने के कारण जानवरों के चारे व पानी की व्यवस्था घर में ही करनी पड़ रही है। जानवरों के लिए सिविल भूमि व पंचायती वनों से

गरीब परिवारों को चारा उपलब्ध न हो पाने के कारण जो परिवार दूध व घी का व्यापार करके अपने परिवार का भरण-पोषण करते थे उनकी रोजी छिन्न-भिन्न होती जा रही है।

४. गांव के सभी बुर्जग लोगों से आज भी सुना जा सकता है कि आज से २०-२५ वर्ष तक सिविल वनों से इमारती लकड़ी आवश्यकता के अनुसार उपलब्ध हो जाती थी लेकिन सिविल वनों के कटने के बाद लोगों ने पंचायती वनों का भी इस तरह से विदोहन व विनाश किया कि आज गांव में इमारती लकड़ी का अभाव हो गया है। जहां गांव के धनी वर्ग द्वारा सीमेंट के उपयोग से इस समस्या का निदान किया जा रहा है वहीं पर गरीब तबके के लोगों द्वारा इमारती लकड़ी के अभाव में काफी कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है और गांव की सीमा से लगे सरकारी वन से चोरी-छिपे इमारती लकड़ी लेकर अपनी आवश्यकता की पूर्ति करनी पड़ रही है। वर्तमान में सरकारी जंगल से किये जा रहे अन्धाधुन्ध कटान के कारण सरकारी जंगल में भी इमारती लकड़ी का ५-६ वर्षों में अभाव होना निश्चित है।

५. साधारणतया सिविल वन व भूमि तथा पंचायती वन से लोगों को लकड़ी चीरने व पत्थर (छत बनाने के) निकालने में रोजगार व आय प्राप्त होती थी लेकिन अब इमारती लकड़ी के पेड़ों के अभाव व पत्थर निकाले वाली जगह का निजीकरण होने से गांव के युवकों की रोजी-रोटी छिन चुकी है और वे विवश होकर रोटी की तलाश में अन्य क्षेत्रों में जाने को मजबूर हो रहे हैं।

६. साधारणतया सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन से लोगों को हिसालू, किरमड़, काफल तथा अखरोट जैसे फल नि:शुल्क व बहुतायत मात्रा में मिलते थे वनों के कटान से अब इनका अभाव हो गया है। फलों के साथ-साथ तरूड़ की सब्जी भी लोग वनों से प्राप्त करते थे अब निजीकरण से ये चीजें भी गरीबों से छिन गयी है।

७. सिविल भूमि में हुए अतिक्रमण से वर्तमान समय में मकानों को बनाने के पत्थरों का भी अभाव होता जा रहा है क्योंकि अतिक्रमण वाले भाग से निजी व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का उसमें से पत्थर नहीं निकालने दे रहे हैं। पत्थरों को तोड़ कर निर्माण जैसे कार्य में लगे गरीब ग्रामीण लोगों को अब इस क्षेत्र में भी बेरोजगार होना पड़ रहा है।

८. सिविल भूमि में किये गये अतिक्रमण से आज वन विभाग व पर्यावरण विभाग के माध्यम से जो वनीकरण की योजनायें बनायी जा रही हैं वे मात्र कागजी हैं। कारण यह है कि जब जमीन पर निजी व्यक्ति का आधिपत्य है तो वनीकरण कैसे सफल होगा। सरकारी विभाग भी निजी व्यक्ति से मिलकर उसके अतिक्रमण की भूमि में वनीकरण कर रहे हैं अतिक्रमण किया हुआ व्यक्ति वनीकरण के लिए बनायी गयी दीवालों को अपनी सम्पत्ति मान कर स्वंय उसमें मजदूरी भी कर रहे हैं जबकि ग्राम समाज इस प्रकार की भूमि पर दिखावटी वनीकरण को मात्र देख सकते हैं और उसमे उनको रोजगार उपलब्ध नहीं हो रहा है।

९. नलों द्वारा पेयजल का बंटवारा सही ढ़ग से नहीं हो पाने के कारण जहां गांव के गरीब हरिजन पेयजल ग्रस्त हैं वहीं दूसरी ओर सभी सदस्यों को पेयजल के लिए काफी दूरी तय करनी पड़ रही है।

१०. गांव में बने गूलों को पाटकर उसमें खेती करने से गांव के जिन हिस्सेदारों की जमीन निचले हिस्से में है वे भूमि कटाव से त्रस्त हैं तथा प्रतिवर्ष उपजाऊ भूमि नदी-नालों में मिलकर बह रही है इस प्रकार के भूमि कटाव से, सिंचित भूमि पर नाली-मुट्ठी के हिस्सेदार कृषक सिंचित भूमि से हाथ धो बैठे हैं और भविष्य में सिंचित भूमि के एक बड़े भाग के धंसने की आशंका बनी हुई है।

निष्कर्ष व सुझाव

जनसंख्या के बढ़ते दबाव, बेरोजगारी, निर्धनता गांव में पंचायत चुनाव में बने पक्ष-विपक्ष, सरकारी पक्ष का ध्यान इस ओर आकृष्ट न होना, पंचायत के सदस्यों द्वारा निर्भीक व स्वतंत्र होकर न्याय न करने तथा लोगों में अशिक्षा होने तथा पहले लोग पारम्परिक नियमों से बंधे थे वे अब टूटते जा रहे हैं आदि कारणों से संसाधनों पर अतिक्रमण व निजीकरण की प्रक्रिया जारी रही है। वर्तमान में वन पंचायत की भूमि व बरसात में पानी बहने वाले नाले व गधेरे ही शेष बचे हैं उनमें जहां पंचायत वनों में अतिक्रमण जारी है वहीं दूसरी ओर मकान बनाने के पत्थरों के लिए गधेरे व नालों में अतिक्रमण भी निकट भविष्य में अवश्यम्भावी है जिससे गांव में जहां सामाजिक वैमनस्यता फैलने की संभावना हैं वहीं दूसरी ओर गरीबों का जीवन अधिक कष्टकारी होते जायेगा। अत: समय रहते सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन की प्रबन्ध व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन करना आवश्यक होगा क्योंकि इस प्रकार की समस्या मात्र गांव गडेरा में ही विद्यमान नहीं है वरन् उत्तराखण्ड के लगभग सभी गांव इस समस्या से ग्रसित होते जा रहे हैं अत: इस समस्या के सामाधान हेतु कुछ सुझाव देना भी तर्क संगत होगा।

१. गांव में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन के रूप में विद्यमान सम्पत्ति पर से सर्वप्रथम अतिक्रमण को हटाना न्याय संगत होगा। अतिक्रमण हटाने के बाद सर्वप्रथम सिविल भूमि व पंचायती वन व भूमि का पुन: सीमांकन करना उचित होगा। सीमांकन के बाद कुछ भाग में जानवरों को चराने की सुविधा तथा कुछ भाग में चारे व ईंधन के वन लगाने चाहिए शेष भाग में घास पालकर प्रति परिवार एक व्यक्ति को घास काटने की छूट मिलनी चाहिए ताकि सभी परिवार समान रूप से इसका लाभ ले सकें।

२. आज तक मात्र पटवारी ही एक सरकारी प्रतिनिधि के रूप में सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन से सिर्फ गरीब लोगो का चालान कर स्वलाभ लेते आये हैं अत: भविष्य में नयी पंचायत व्यवस्था में एक समिति का गठन कर सामान्य जन सम्पत्ति संसाधन के प्रबन्ध के लिए पटवारी सहित राजस्व विभाग व विकास खण्ड स्तर के अधिकारियों को सम्मिलित करना चाहिए।

३. यह भी सकारात्मक होगा कि गांव की सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों पर अतिक्रमण करने वाले व्यक्ति को कानून के शिकंजे में रखा जाय ताकि अन्य लोग उसको देखकर स्वंय सबक सीखें।

४. वन पंचायत व ग्राम पंचायत में सामन्जस्य होना भी तर्कसंगत होगा क्योंकि दोनों आज तक एक दूसरे को सहयोग करते हुए नहीं देखे गये है।

५. लोगों को वन व पर्यावरण के सम्बन्ध में जागरूक व शिक्षित करना भी आवश्यक होगा क्योंकि आज गांव का लगभग प्रत्येक परिवार अपनी ईंधन व चारे तथा पेयजल के अत्यधिक विदोहन व कुप्रबन्ध से ग्रसित है।

६. भोजन पकाने व कमरा गरम करने के लिए जो अनाप शनाप वन विदोहन किया जा रहा है उसको रोकना व विकल्प की खोज आवश्यक है। सर्वप्रथम जो छोटी-छोटी झाड़ियों व पड़े पौधों को लोगों द्वारा जलाऊ लकड़ी के लिए काटा जाता है उनको काटना तुरन्त बन्द करना चाहिए और बड़े वृक्षों में एक पेड़ को दो-तीन परिवारों में बांटने की व्यव्स्था होनी चाहिए ताकि प्रतियोगिता में काटे जाने वाले वृक्षों को कटने से बचाया जा सके ।

७. गांव में नौकरी पेशा वाले लोग भी अधिसंख्य परिवारों में है जो प्राकृतिक गैस का उपयोग कर सकते है अत: प्राकृतिक गैस की व्यवस्था होने पर वनों को दोहन से बचाया जा सकता है इसके साथ-साथ पवन चक्की, लघु जल विद्युत, सौर उर्जा के स्त्रोतों का विकास करके गांव की सामान्य जन सम्पत्ति संसाधनों को उनके पूर्व स्वरूप में लाया जा सकता है जिससे एक तरफ वन गांव के नजदीक आयेंगे वहीं दूसरी ओर गरीबों व स्त्रियों के कष्टों में कमी आयेगी।

संदर्भ

१. सिंह, छत्रपति -कामन प्रापर्टी एण्ड कामन प्रावर्टी , इण्डियाज फारेस्ट एण्ड फारेस्ट डवैलर्स एण्ड द ला, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस दिल्ली, १९८६.

२. जोधा, एन० एस० - कामन प्रापर्टी रिर्सोसेज एण्ड रूरल पुअर इन ड्राई रीजन ऑफ इण्डिया, इकानामिक एण्ड पालिटीकल वीकली, वाल्यूम २१, न० २७, १९८६.

३. आयंगर, सुदर्शन - कामन प्रापर्टी लैण्ड रिर्सोसेज इन गुजरात, सम फाइन्डिग्स एबाउट दियर साइज, स्टेटस एण्ड यूज, द गुजरात इन्स्टीट्यूट ऑफ डेवलेपमैन्ट रिसर्च, अहमदाबाद, १९८८.

४. गुहा, रामचन्द्र- ब्रिटिश कुमायूं में वन व्यवस्था और वनान्दोलन, पहाड़-२, १९८६.

५. गढ़िया, प्रताप सिंह- उत्तरांचल क्षेत्र में निर्वनीकरण और ग्रामीण स्त्रियों की समस्यायें, वर्किंग पेपर न. १२२, गिरि विकास अध्ययन संस्थान लखनऊ, १९९६

६. गढ़िया, प्रताप सिंह-वन एवं पर्यावरण, हिमालय निवासी और निसर्ग, वर्ष ८, अंक ४, दिसम्बर १९९४.

७. बल्लभ, विश्व एण्ड सिंह कतार - वन पंचायत इन यू०पी० हिल्स; ए क्रीटीकल एनालीसिस, रिसर्च पेपर न०२, इन्स्टीट्यूट ऑफ रूरल मैनेजमेन्ट आनन्द, सितम्बर १९८८.

८. सिंह कतार - मनैजिंग कॉमन पूल रिर्सोसेज, प्रिन्सिपल एण्ड केस स्टडी, ऑक्सफोर्ड प्रेस बम्बई, १९९४.